ओऽम् त्र्यम्बकम् यजामहे सुगंधिम् पुष्टिवर्धनम्
उर्वारुकमिवबन्धनान् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।।

हिन्दी मिलाप

मंगलवार, 7 फरवरी, 2012

अफसरों के क्षोभ का संदेश

इन दिनों देश के भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.ए.एस.) संवर्ग के अधिकारियों में भारी बेचैनी पायी जा रही है। इसका एक नमूना आंध्र प्रदेश के अधिकारियों में तब देखने को मिला जब वे गत तीन फरवरी को मुख्यमंत्री किरण कुमार रेड्डी से मिले। मुख्यमंत्री को सौंपे ज्ञापन से साफ पता चलता है, राज्य के आई.ए.एस. अफसरों में इस बात की काफी चिंता और क्षोभ है कि 'भ्रष्टाचार' के संदर्भ में सिर्फ अफसरों की गिरफ्तारी हो रही है। प्रताड़ित किया जा रहा है। जबकि इसके लिए ज़िम्मेदार नेताओं को बख्शा जा रहा है। मुख्यमंत्री ने इस पर जो और जैसा 'आश्वासन' देना चाहिये था, दिया। जबकि असंतुष्ट अफसर इस मुद्दे को ऊपर (प्रधानमंत्री) तक ले जाने की बात कर रहे हैं।

इसे संयोग ही कहा जा सकता है कि जिस दिन राज्य के अफसर मुख्यमंत्री से मिल रहे थे, उसी दिन देश के सभी राज्यों, केन्द्र शासित प्रदेशों के मुख्य सचिवों का एक सम्मेलन दिल्ली में हो रहा था। अपने उद्घाटन भाषण में, प्रधानमंत्री ने आई.ए.एस. अफसरों को एक लम्बी नसीहत दी और आने वाले दिनों में एक 'बड़े कर्त्तव्य' का अहसास कराया। दुनिया भर में भारतीय नौकरशाहों के भ्रष्ट होने की बदनामी और घोटालों में घिरते जा रहे अफसरों को प्रधानमंत्री ने ढाढ़स बंधाया और कहा कि 'सार्वजनिक जीवन में पारदर्शिता, जवाबदेही और शुचिता लाने में अभी लंबा वक्त लग सकता है।'

राज्य के मुख्य सचिवों के सम्मेलन में प्रधानमंत्री ने, उनके सेवा-संवर्ग (आई.ए.एस.) के संवैधानिक दायित्वों का भी बोध कराया। प्रधानमंत्री ने माना कि देश में बुनियादी सुविधाओं की कमी, 'विकास' में सबसे बड़ी बाधा है। बावजूद इसके, उन्हें (यानी राज्यों को) कृषि अनुसंधान में औद्योगिकी पर ध्यान देना चाहिये। प्रधानमंत्री ने मुख्य सचिवों को कहा कि वे यह सुनिश्चित करें कि उनके राज्य, 'राष्ट्रीय मैन्युफैक्चरिंग नीति' का अनुसरण करें, जिससे सकल घरेलू उत्पादन में मैन्युफैक्चरिंग क्षेत्र के योगदान को बढ़ाया जा सके। प्रधानमंत्री ने मुख्य सचिवों को अपने-अपने राज्यों में 'कौशल विकास' पर ध्यान देने पर बल दिया क्योंकि प्रधानमंत्री को आशा है कि 2018 तक देश में 28 करोड़ कुशल कामगारों की ज़रूरत होगी।

प्रधानमंत्री के भाषण के बाद अफसरों में एक अलग तरह की 'फुसफुसाहट' और क्षोभ पैदा हुआ। वरिष्ठ नौकरशाहों का यह मानना था कि देश या राज्यों के 'आर्थिक विकास' में अवरोधक अफसरशाही नहीं बल्कि 'राजनीति' है। अगर मैन्युफैक्चरिंग को बढ़ावा देना है तो पहले राज्यों में सत्तारुढ़ दलों को 'एकमत' करना होगा। राजनीतिक नेतृत्व की आपसी प्रतिस्पर्द्धा से हो रहे नुक़सान के लिए अफसरशाही को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता।

तीन और चार फरवरी को दिल्ली में हुए, राज्यों के मुख्य सचिवों के बीच अनौपचारिक बातचीत का ज्यादातर हिस्सा 'भ्रष्टाचार' के आरोप में घिरते और बदनाम हो रहे अफसरों का रहा। इस स्थिति को चिंताजनक माना गया, क्योंकि अधिकतर अफसर भ्रष्टाचार का आरोप लगने के डर से अपने कर्त्तव्य के प्रति शिथिलता बरतने पर बाध्य हैं। कुछ इसी प्रकार का विचार आंध्र प्रदेश के वरिष्ठ अफसरों का भी है। आंध्र प्रदेश के 'भारतीय प्रशासनिक सेवा संघ' के सदस्य अब राजनीतिज्ञों द्वारा प्रायोजित घपले में शिरकत करने से इनकार करने पर विचार कर रहे हैं। अगर ऐसा हुआ तो वह दिन, प्रशासनिक सेवा शर्तों के लिए शुभ माना जायेगा और राजनीतिज्ञों के लिए खतरे की घंटी।

भटकाव की राह पर माओवादी

इन बौद्धिक जुगालीकारों को असैद्धांतिक और तर्कहीन नक्सली पीड़ा तो समझ में आती है, लेकिन उनके द्वारा बहाया जा रहा देशभक्त पुलिस जवानों और आमजन का खून पानी नज़र आ रहा है। क्या पुलिस जवानों की हत्या मानवता और मानवाधिकार से इतर का मामला है? क्या वर्दी में रहने वाला जवान नागरिक समाज का सदस्य और भारतीय कहलाने का हक नहीं रखता है?

शीशे की तरह साफ हो गया है कि माओवादी सामाजिक परिवर्तन के नुमाइंदे और आर्थिक समानता के पैरोकार नहीं बल्कि हद दर्जे के लूटेरे और मातृभूमि के साथ घात करने वाले देशद्रोही हैं। उन्होंने इसका घिनौना सबूत भी झारखण्ड राज्य के भंडरिया थाना क्षेत्र में बारूदी सुरंग विस्फोट में 15 जवानों की हत्या कर दे दिया है। अभी कुछ महीने पहले ही उन्होंने इसी राज्य के लोहरदगा जिले में भी बम विस्फोट कर सीआरपीएफ के तकरीबन एक दर्जन जवानों को लहूलुहान कर दिया था। इस तरह की विध्वंसक घटनाएँ इस बात की तस्दीक करती हैं कि हज़ारों जवानों की शहादत के बाद भी हमारी सरकार माओवादियों के आततायीपूर्ण कृत्यों से चेती नहीं है। भंडरिया और लोहरदगा में माओवादियों का देशद्रोहात्मक घृणित कारनामा कोई पहली घटना नहीं है।

वे इससे पहले भी दंतेवाड़ा और गढ़चिरौली सहित देश के अन्य भू-भागों में अपने आतंकी कारनामों से देश को दहला चुके हैं। केंद्र में सत्ता की लगाम पकड़े यूपीए सरकार हर रोज जुगाली कर रही है कि नक्सली आतंक से निपटने के लिए उसके पास रोडमैप है और देर-सबेर वह नक्सल हिंसा पर काबू पा लेगी। लेकिन सरकार की लफ़्फ़ाजी, अक्षमता और निष्क्रियता की वजह से नक्सली आतंक चरम पर पहुँच चुका है। नक्सलियों की बढ़ती ताकत का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि पिछले दिनों वे उड़ीसा राज्य के मलकानगिरी के जिलाधिकारी आरवी कृष्णा का अपहरण करने में कामयाब रहे, और उनकी रिहाई के बदले अपने कई खतरनाक साथियों को भी छुड़ा ले गए। बात समझ से परे है कि आखिर सरकार नक्सली आतंक को लेकर इतनी उदसीन क्यों है? अचंभित करता है कि सरकार के कुछ नुमाइंदे नक्सल हिंसा को आतंकी गतिविधियों से जोड़कर देखेने के बजाए उसका राजनीतिकरण करने पर आमादा हैं।

पिछले दिनों संप्रग सरकार के गृहमंत्री पी. चिदंबरम नक्सली हिंसा पर लगाम लगाए जाने के बजाए भगवा आतंकवाद का शिगुफा छोड़ते देखे गए। कांग्रेस के बड़बोले महासचिव दिग्विजय सिंह तो आए दिन नक्सलियों के खिलाफ पुलिस कार्रवाई का विरोध करते देखे जाते हैं। सत्तापक्ष के ही कुछ अन्य राजनीतिक नक्सलियों को आतंकी ठहराए जाने की मुखालफत के साथ उन्हें सामाजिक परिवर्तन के नुमाइंदे बताने पर जोर देते हैं। ऐसे कुतर्कवादियों से पूछा जा सकता है कि डेढ़ दर्जन राज्यों में घातक हथियारों के दम पर आतंक फैलाने वाले नक्सली आखिर सामाजिक परिवर्तन के नुमाइंदे कैसे कहे जा सकते हैं? आज देश के 203 से अधिक जिलों में तीस हज़ार से अधिक नक्सली आतंकी सक्रिय हैं और देशविरोधी गतिविधियों में लिप्त हैं। इनके पास रूस, अमेरिका और चीन निर्मित अत्याधुनिक हथियारों के होने की भी पुष्टि हो चुकी है। पिछले दिनों वे बिहार के रोहतास जिले में बीएसएफ शिविर पर राकेट लांचरों से हमला कर इसका सुबूत भी दे चुके हैं। ऐसे में नक्सलियों के पैरोकारों से पूछा जाना चाहिए कि सामाजिक परिवर्तन आर्थिक बराबरी की लड़ाई का यह कौन-सा नायाब नमूना है? यह भी पूछा जाना चाहिए कि अपहरण, फिरौती और राष्ट्रविरोधी कृत्यों से हज़ारों करोड़ इकठ्ठा करने वाले नक्सली आखिर किस तरह की सामाजिक व्यवस्था के निर्माण का खाका खींचेंगे? यह भी किसी से छिपा नहीं है कि नक्सली अपने क्षेत्रों में काम करने वाली कंपनियों से रंगदारी वसूल कर रहे हैं और वहाँ का स्थानीय प्रशासन तमाशबीन बना हुआ है।

नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में चलने वाली कल्याणकारी योजनाओं का एक बड़ा हिस्सा नक्सलियों की जेब में जा रहा है और इस धनराशि से उन्होंने हथियार व गोला-बारूद खरीदकर राज्य सरकारों के खिलाफ अघोषित युद्ध छेड़ रखा है। ऐसा भी नहीं है कि यह सब जानकारी केंद्र सरकार के संज्ञान में नहीं है। पिछले दिनों छत्तीसगढ़ में दंतेवाड़ा की घटना के बाद केंद्रीय खुफिया विभाग द्वारा जो रिपोर्ट सरकार को दी गयी उससे खुलासा हुआ है कि कुछ बड़े अधिकारी नक्सलियों से सहानुभूति भी रखते हैं। लेकिन सरकार इन अधिकारियों की पहचान करने और इन पर कार्रवाई करने से कतरा रही है। क्या यह विचित्र नहीं लगता है कि जहाँ एक ओर अमेरिका अपने दुश्मनों को खत्म करने के लिए दूसरे देशों की सरहदों को पार कर रहा है, वहीं भारत सरकार अपने ही भू-भाग पर आतंक मचाने वाले राक्षसों पर दया दिखा रही है? इस बात को न्यायसंगत कैसे ठहराया जा सकता है कि पुलिस के जवानों की हत्या करने वाले नक्सली मानवता के हितैषी हैं और ऐसा कर वह समतामूलक समाज की स्थापना करना चाहते हैं? त्रासदी ही कही जाएगी कि भारतीय समाज का एक तथाकथित प्रबुद्ध वर्ग नक्सलियों के बचाव में कुतर्क के हथियार के साथ खुलकर खड़ा हो गया है। वह कभी मानवाधिकारों का सवाल उठा रहा है तो कभी पुलिस कार्रवाई को बर्बर और अनुचित ठहराने की कोशिश कर रहा है। दुखद यह भी है कि सरकार इन कुतर्कवादियों की कमजोर दलीलों से इत्तेफाक भी रख रही है, लेकिन कुतर्कवादी यह बताने को बिल्कुल तैयार नहीं हैं कि नक्सलियों की गरजती बंदूकों का मुँह कब बंद होगा? आखिर व्यवस्था परिवर्तन के नाम पर सड़कों, पुलों, स्कूलों, रेलपटरियों और स्वास्थ्य केंद्रों को बम से उड़ाना किस प्रकार की राष्ट्रभक्ति और सामाजिक परिवर्तन की विधा हो सकती है? दुर्भाग्यपूर्ण ही कहा जाएगा कि नक्सली आतंक को व्यवस्था परिवर्तन की लड़ाई बताने वाली बौद्धिक जमात नक्सलवाद को एक ऐसी परिभाषा में ढ़ाल रही है, जो एक संप्रभु राष्ट्र के जीवन को खतरे में डाल सकता है।

इन बौद्धिक जुगालीकारों को असैद्धांतिक और तर्कहीन नक्सली पीड़ा तो समझ में आती है, लेकिन उनके द्वारा बहाया जा रहा देशभक्त पुलिस जवानों और आमजन का खून पानी नज़र आ रहा है। और हज़ारों-करोड़ की संपत्ति का नुकसान भी उनके लिए तनिक मायने नहीं रखता है। आखिर ऐसा क्यों? पिछले दिनों ही देखा गया कि छत्तीसगढ़ के नक्सली बौद्धिक पैरोकार विनायक सेन को जब अदालत द्वारा सज़ा सुनायी गयी तो उनके समर्थन में देश भर में कैंडिल मार्च निकाला गया। सड़कों पर मानवाधिकारवादियों का हुजूम उमड़ पड़ा। इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया में उनके पक्ष में बहस-वितंडा के साथ बड़े-बड़े लेख भी लिखे गए। लेकिन पुलिस जवानों की हत्या पर उनकी जुबान क्यों नहीं खुल रही है? क्या पुलिस जवानों की हत्या मानवता और मानवाधिकार से इतर का मामला है? क्या वर्दी में रहने वाला जवान नागरिक समाज का सदस्य और भारतीय कहलाने का हक नहीं रखता है? अच्छा तो यह होता कि पुलिस जवानों की हत्या पर भी देश में जायज बहस चलायी जाती और बौद्धिक कहे जाने वाले जीवों द्वारा मुखर होकर नक्सलियों की धत्कर्मों की पुरजोर निंदा की जाती। लेकिन इस देश में कुछ सेक्यूलर कहलाने का शौक पाले हुए राजनेताओं से लेकर ढोंगी समाजसेवियों ने दोहरा मापदण्ड अपना रखा है। क्या ऐसे मदारीपन वाले आचरण से अराजक नक्सलियों को बल नहीं मिलेगा? अगर हमारे देश के राजनीतिक प्रपंचियों को ओसामा-बिन-लादेन की अंत्येष्टि धार्मिक रीति-रिवाजों से हो इसकी चिंता सताती है, तो फिर उन्हें अपने ही देश के जवानों की नक्सलियों द्वारा की जा रही हत्या क्यों नही विचलित करती है? क्यों नहीं उनकी मरी आत्मा में संवेदना प्रवाहित होती है? पर दुर्भाग्यपूर्ण यह है कि सरकार से लेकर तथाकथित बुद्धिजीवी समाज की चिंता का संपूर्ण दायरा सिर्फ इस बात तक सीमित रह गया है कि नक्सलियों को आतंकी क्यों कहा जा रहा है? क्यों नहीं उन्हें सामाजिक परिवर्तन का मसीहा माना जा रहा है? ऐसे में नक्सलियों को हीरो बनाने पर तुले इन लोगों से भला कैसे उम्मीद की जाए कि पुलिस जवानों की शहादत पर उनकी आँखों से श्रद्धांजलि की दो बूँद भी टपकेंगी?

- अरविंद जयतिलक

बदहाली का शिकार घरेलू महिला कामगार

घरेलू जीवन के रोजमर्रा के तंत्र में कामवाली बाइयों के महत्व को किसी भी तरह से कम करके नहीं आंका जा सकता है। कम से कम भारत में तो कामवाली बाइयों को बुनियादी आवश्यकता कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। उदारीकरण के बाद के वर्षों में देश में आय वितरण की बढ़ती विषमता के फलस्वरूप एक ओर जहाँ मध्यमवर्गीय लोगों की संख्या में तो वहीं दूसरी ओर गरीबी के शिकार लोगों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। इसी के साथ ग्रामीण क्षेत्र से भूमिहीन श्रमिकों का शहरों की ओर पलायन भी बढ़ा है। इस दौरान एकल परिवारों और नौकरी करने वाली महिलाओं की संख्या में भी तेजी से वृद्धि हुई है। इन सब कारणों से घरेलू कामगारों विशेषकर महिलाओं (अर्थशास्त्र की भाषा) की माँग और पूर्ति में भी वृद्धि हुई है। सन 1999-2000 और 2004-05 के मध्य के 5 वर्षों में ही घरेलू काम करने वाली महिलाओं की संख्या में 22.5 लाख की बढ़ोत्तरी हुई है। इन कार्यशील महिलाओं का अधिकांश भाग विधवाओं, परित्यक्ताओं ओर अन्य कई मुसीबतों की शिकार महिलाओं का होता है। इन घरेलू कार्य करने वाली महिलाओं को तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है, प्रथम जो अनेक घरों में कार्य करती हैं, द्वितीय वे जो एक ही घर में सीमित समय के लिए कार्य करती हैं और तृतीय वे जो एक ही घर में पूर्णकालिक कार्य करती हैं।

इनमें से अधिकांश अनेक घरों में कार्य करती हैं, तथा आजीविका लायक आय प्राप्त करने के लिए उन्हें सुबह से शाम तक सतत कार्य करना पड़ता है। कार्य के अत्यधिक बोझ के कारण ये अक्सर पीठ दर्द, थकावट आदि का शिकार हो जाती हैं, कुछ कार्य जैसे बर्तन मांजने व कपड़े धोने वाली महिलाओं की हाथों की उंगुलियों में घाव हो जाते हैं। इसके बावजूद इन्हें यही कार्य करना पड़ता है। इसमें से अनेक महिलाओं के रक्त में होमोग्लोबिन की मात्रा 3 ग्राम ही पाई गई, जबकि इसका सामान्य स्तर 11.5 ग्राम से 15.5 ग्राम का होता है। स्वास्थ्य खराब होने पर भी इनके लिए चिकित्सा प्राप्त करना कठिन होता है, क्योंकि सार्वजनिक अस्पतालों में लगने वाला समय उनके पास नहीं होता एवं निजि चिकित्सा सेवा की लागत चुका पाना इनके बस में नहीं होता है। पूर्व में घरेलू काम करने वाली अधिकांश महिलाएँ पूर्णकालिक होती थीं और एक ही परिवार के साथ कार्य करने के कारण उनमें तथा कार्य करने वाले परिवार के मध्य सामाजिक व मनौवैज्ञानिक जुड़ाव हो जाता था, जो उन्हें प्रतिकूलता की स्थिति में सुरक्षा प्रदान करता था। परंतु अब अनेक घरों में कार्य करने के कारण ये अपने आवास के आसपास ही कार्य ढूँढती हैं और चाहती हैं कि कार्यस्थल एवं निवास के मध्य कम से कम दूरी हो। यही कारण है कि बड़े शहरों में मध्यमवर्गीय बस्तियों के आस-पास झुग्गी-झोपड़ियाँ भी बस जाती हैं। शहरों के सौंदर्यीकरण की प्रक्रिया में इन्हें वहाँ से हटाकर नए मकानों में बसाने का जब भी प्रयास किया जाता है, तो ये वहाँ जाना पसंद नहीं करतीं क्योंकि ये बस्तियाँ उनके कार्यस्थल से काफी दूर होती हैं।

असंगठित और टुकड़ों-टुकड़ों में कार्य करने के कारण इन्हें मिलने वाली मजदूरी इनके मोल भाव करने की शक्ति पर निर्भर होती है। यही कारण है कि मजदूरी की दरों में काफी विषमता पाई जाती है। वैसे अधिकांश को अकुशल श्रम के लिए निर्धारित न्यूनतम मजदूरी भी नहीं मिल पाती है। पिछले वर्षों में इन्हें कार्य दिलाने के नाम पर अनेक प्लेसमेंट एजेंसियाँ भी स्थापित हो गई हैं, जो इनका शोषण ही करती हैं। पर्याप्त आय और बेहतर कार्यस्थल वाले रोजगार दिलाने के नाम पर एजेंट इन्हें शहरों में ले जाते हैं। युवा लड़कियों को अच्छे वर से शादी कराने का झांसा देकर भी आवास से काफी दूर शहरों में घरेलू कार्य करने के लिए बाध्य किया जाता है तथा शारीरिक शोषण तक किया जाता है। अकेली दिल्ली में 800 से 1000 के मध्य ऐसी प्लेसमेंट एजेंसिया कार्य कर रही हैं। यही स्थिति मुंबई, कोलकाता, चैन्नई जैसे शहरों में भी है। इन्हें शोषण से बचाने के लिए राज्य सरकारों ने कोई कदम नहीं उठाए हैं। इनकी बढ़ती संख्या, कार्य की विविधता, कार्य लेने वालों की विशाल संख्या के कारण इन्हें क़ानूनी सुरक्षा देने का कार्य काफी चुनौतीपूर्ण होते हुए भी आज की परिस्थितियों में आवश्यक हो गया है। हमारे श्रम क़ानूनों में वैसे भी महिला कामगारों की उपेक्षा होती रही है। यही कारण है कि न्यूनतम मजदूरी, कार्य के घंटे, व्यावसायिक खतरों में सुरक्षा आदि के बारे में जो भी क़ानून बने हैं, उनमें इन घरेलू कार्य करने वाली महिलाओं की उपेक्षा ही की गई है।

ग़ौरतलब है कि धीरे-धीरे ही सही शहरों में अब कामवाली बाइयों की यूनियनें गठित होने लगी हैं। राज्य सरकारें भी उनके अधिकारों और सम्मान के बारे में सजग हो चली हैं। लोकसभा में महिला एवं बाल विकास मंत्री कृष्णा तीरथ द्वारा महिलाओं का कार्यस्थल में लैंगिक उत्पीड़न से संरक्षण संबंधी विधेयक 2010 पटल पर रखा गया था। यद्यपि इसमें घरेलू नौकरानियों के दैहिक शोषण के संबंध में स्पष्ट व्याख्या नहीं थी। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने घरों में काम करने वाली महिलाओं को कामवाली बाई के बदले बहन जी अथवा दीदी के संबोधन से पुकारने की अपील की। उनका मानना है कि इससे घरेलू काम-काज करने वाली औरतों के सम्मान को बढ़ाया जा सकता है। उन्होंने घरेलू नौकरानियों की महापंचायत के आयोजन किए जाने का भी आह्वान किया। उन्हें फोटोयुक्त परिचय-पत्र तथा प्रशिक्षण दिए जाने की भी योजना है।

महाराष्ट्र और केरल की भाँति दिल्ली राज्य सरकार घरेलू कामगार एक्ट लागू करने के लिए प्रयास कर रही है, जिनके अंतर्गत कामवाली बाई साप्ताहिक अवकाश के साथ-साथ अन्य सुविधाएँ लेने की भी पात्र होंगी। दिल्ली सरकार के श्रम विभाग द्वारा साप्ताहिक अवकाश, न्यूनतम वेतन तथा अन्य सुविधाओं का खाका तैयार किया जा चुका है। यह लाभ उन सभी कामवाली बाइयों को मिलेगा जो अपना पंजीयन कराएँगी। यदि वह सब यथावत होता है, तो कामवाली बाइयों की जीवन दशा में सकारात्मक सुधार होकर रहेगा।

श्रम एवं रोजगार मंत्रालय की ओर से घरेलू श्रमिकों के लिए तैयार की जा रही राष्ट्रीय नीति का मसौदा तैयार कर लिया गया है। नीति के तहत करीब 64 लाख घरेलू श्रमिकों को शामिल करने का अनुमान है। नीति के मसौदा प्रस्ताव के तहत न्यूनतम वेतन, सामान्य कार्य के घंटे, अतिरिक्त काम करने पर मुआवजा (ओवरटाइम), वेतन के साथ वार्षिक अवकाश और चिकित्सा अवकाश को शामिल किया गया है। इसके साथ ही श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा, मातृत्व लाभ और यौन शोषण से सुरक्षा जैसे मसलों को भी जोड़ा गया है। इन बदलावों को शामिल करने के लिए मंत्रालय 8 मौजूदा क़ानूनों में संशोधन की योजना बना रहा है। इन क़ानूनों में न्यूनतम मजदूरी क़ानून, ट्रेड यूनियन क़ानून, श्रमिक मुआवजा क़ानून आदि शामिल हैं। हालाँकि श्रमिक का मामला राज्य सरकार के तहत आता है। ऐसे में केंद्र सरकार को इस मामले में राज्यों के साथ भी सहमति बनानी होगी।

- डॉ. आशीष वशिष्ठ

बंगलादेश में सैनिक क्रांति का षड्यंत्र

हाल के वर्षों में जब से शेख हसीना बंगलादेश की प्रधानमंत्री बनी हैं, भारत के साथ उनके संबंध बहुत मधुर हो गये हैं। परन्तु भारत के दुश्मन जो पाकिस्तान, चीन या बंगलादेश में हैं, को यह बात नहीं भा रही है। अब जाकर यह रहस्योद्घाटन हुआ है कि गत दिसम्बर में प्राय: दो दर्जन सैनिक अफसरों ने कुछ रिटायर्ड जनरलों की मदद से शेख हसीना का तख्ता-पलट करने का विफल प्रयास किया।

प्रधानमंत्री शेख हसीना के निकटतम सलाहकार गौहर रिजवी ने हाल ही में एक प्रेस कांफ्रेंस में यह रहस्योद्घाटन किया है कि सैनिक क्रांति का भंडाफोड़ गत दिसम्बर माह में ही हो गया था। बंगलादेश की सेना ने गुप्त सूचना मिलने पर अधिकतर षड्यंत्रकारियों को एक-एक कर गिरफ्तार कर लिया और उन्हें किसी अज्ञात स्थान पर ले जाकर पूछताछ करना शुरू कर दिया है। कहा जाता है कि इस सैनिक क्रांति का मास्टरमाइंड मेजर सईद मोहम्मद जियाउल हक था, जिसने फेसबुक, ई-मेल और ट्विटर के माध्यम से दूसरे इस्लामी कट्टरपंथी सैनिक अफसरों को भड़काया। वे इस बात के लिये तैयार हो गये कि शेख हसीना की सरकार को उखाड़ फैंका जाए। ऐसी आशंका थी कि गत 10 या 11 जनवरी को सैनिक क्रांति होने वाली थी, जिसमें या तो शेख हसीना को गिरफ्तार कर लिया जाता या उनकी हत्या हो जाती।

कहा जाता है कि इस षड्यंत्र की खबर सबसे पहले भारतीय गुप्तचरों को खासकर रा को मिली और उन्होंने शेख हसीना को एक गुप्त पत्र भेजकर इस षड्यंत्र के बारे में आगाह कर दिया। ऐसी भी खबर है कि भारत सरकार ने यह पक्का प्रबंध कर लिया था कि यदि सैनिक क्रांति द्वारा शेख हसीना का तख्ता-पलट हो गया तो उन्हें और उनके मंत्रिमंडल के सदस्यों तथा आवामी लीग के मुख्य नेताओं को भारतीय सेना के लड़ाकू हेलिकॉप्टरों द्वारा ढाका से बाहर निकाल लिया जाएगा। इसके लिये पश्चिम बंगाल और त्रिपुरा में भारतीय सेना के सैनिक अड्डों पर हेलिकॉप्टर तथा लड़ाकू विमान 24 घंटे तैयार रखे गये थे। ऐसी भी खबर है कि यदि शेख हसीना इस सैनिक क्रांति के खिलाफ भारत से मदद माँगती तो भारतीय थलसेना और वायुसेना इस तरह की मदद करने के लिये तैयार थीं, परन्तु इस बात की सरकारी प्रवक्ता द्वारा अभी तक पुष्टि नहीं हो पाई है।

बंगलादेश के इतिहास में सैनिक क्रांतियों की अनेक घटनाएँ हुई हैं। सबसे पहले 15 अगस्त 1975 को शेख हसीना के पिता बंग-बंधु शेख मुजीबुर्रहमान की हत्या मेजर फारूख रहमान और मेजर रशीद के नेतृत्व में कुछ सिरफिरे सैनिक अफसरों ने कर दी। उसमें उनकी धर्मपत्नी के अलावा उनका पूरा परिवार मारा गया। शेख हसीना उन दिनों देश से बाहर यूरोप में थीं, इसीलिये बाल-बाल बच गईं। उसके बाद नवम्बर 1975 में ब्रिगेडियर खालिद मुशर्रफ ने मेजर रहमान की सरकार का तख्ता-पलट कर दिया। ब्रिगेडियर मुशर्रफ की कुछ विद्रोही फौजियों ने हत्या कर दी और जनरल जियाउर्रहमान देश के सैनिक शासक बने। मई 1981 में जनरल जियाउर्रहमान की हत्या कुछ फौजी अफसरों ने कर दी और सेना के प्रधान जनरल एच.एम. इरशाद देश के प्रधान बने। उन्होंने 8 वर्षों तक देश पर शासन किया। जनवरी, 2006 में बंगलादेश सेना के प्रधान जनरल मोयिनुद्दीन अहमद ने देश में आपातकाल की घोषणा कर दी और सत्ता की बागडोर अपने हाथों में ले ली, परन्तु देश की जनता के व्यापक रोष के कारण उन्हें दिसम्बर, 2008 में आम चुनाव कराना पड़ा।

यदि समय पर भारत सरकार ने शेख हसीना को चेतावनी नहीं दी होती तो संभवत: यह फौजी क्रांति भी सफल हो जाती और शेख हसीना को अपदस्थ कर दिया गया होता। यह भी कहा जाता है कि जैसे ही षड्यंत्र की हवा भारत के गुप्तचरों को लगी, उन्होंने शेख हसीना की सरकार से कहा कि सभी फौजी अफसरों के फोन टैप किये जाएँ। उनके फेसबुक और ट्विटर पर भी कड़ी निगरानी हो, जिससे षड्यंत्र का पर्दाफाश हो सके। जब षड्यंत्र दबा दिया गया और षड्यंत्रकारी वर्तमान और निवृत्त अफसरों को एक-एक कर गिरफ्तार कर अज्ञात स्थान में जेल में डाल दिया गया, तब शेख हसीना ने सार्वजनिक रूप से बयान दिया कि वे बंगलादेश की सेना की आभारी हैं, जिन्होंने समय पर सैनिक क्रांति का पर्दाफाश किया और उन दोषी अफसरों का नकाब उतार दिया, जो देश में कट्टरपंथी इस्लामी शासन लाना चाहते थे। प्रधानमंत्री के सलाहकार गौहर रिजवी ने कहा कि इस षड्यंत्र को शुरू में ही कुचल दिया गया अन्यथा इसके परिणाम बहुत भयानक होते।

देश के एक प्रमुख विपक्षी नेता इशराक अहमद ने भारत पर इल्जाम लगाते हुए कहा है कि फौजी अफसरों की गिरफ्तारी भारत सरकार के इशारे पर हुई है। ये अफसर देशभक्त थे और यह कहना गलत है कि वे शेख हसीना का तख्ता-पलट करना चाहते थे। साथ ही इशराक अहमद ने यह भी कहा कि यदि शेख हसीना बंगलादेश को भारत का पिछलग्गू बनाना चाहेंगी, तो न तो बंगलादेश की जनता और न ही सेना इसको बर्दाश्त करेगी। उन्होंने यह भी इल्जाम लगाया कि भारत की प्रमुख गुप्तचर एजेंसी रा के सीनियर अफसर बंगलादेश की सेना के मुख्यालय में दिन-रात बैठे रहते हैं, और उनके इशारे पर ही शेख हसीना अपनी सरकार चला रही हैं।

शेख हसीना ने गत 21 जनवरी को कहा कि सेना को जितना धन्यवाद दिया जाए, उतना कम है, क्योंकि देशभक्त अफसरों और जवानों ने लोकतांत्रिक तरीके से चुनी हुई सरकार को ध्वस्त होने से बचा लिया। उन्होंने खुलकर अपनी प्रतिद्वंद्वी बेगम खालिदा जिया की तरफ उंगली उठाकर कहा कि वे जिस तरह सेना को उनकी लोकतांत्रिक सरकार के खिलाफ भड़का रही थीं, यह षड्यंत्र उसी का नतीजा था। बेगम जिया ने इसका खंडन करते हुए कहा कि इसमें उनका कोई हाथ नहीं था, परन्तु बेवजह कुछ सीनियर सैनिक अफसरों और रिटायर्ड अफसरों को चुन-चुनकर अज्ञात स्थान पर जेल में डाल दिया गया है। इससे सेना का मनोबल बहुत अधिक गिर गया है।

शेख हसीना ने हाल ही के महीनों में भारत के साथ अत्यन्त ही मित्रवत व्यवहार किया है, जिसका यह परिणाम हुआ है कि उल्फा सहित उत्तर-पूर्वी राज्यों के वे आतंकी जो बंगलादेश में छिपे हुए थे और जहाँ उनके ट्रेनिंग कैंप चल रहे थे, उन्हें उखाड़ फैंका गया और अनेक उग्रवादियों को पकड़कर भारत सरकार को सौंप दिया गया। यही नहीं, पाकिस्तान की गुप्तचर एजेंसी आईएसआई ने जिस तरह बंगलादेश में अपनी जड़ें मजबूत कर ली थीं, उसका भी समूल नाश कर दिया गया, परन्तु समस्या अभी समाप्त नहीं हुई है। जब पाकिस्तान का बोलबाला था उस समय भी पूर्वी पाकिस्तान जिसे अब बंगलादेश कहते हैं, वहाँ की सेना में इस्लामी कट्टरपंथी भरे हुए थे। आज भी उनकी संख्या कम नहीं है। इस्लाम के नाम पर उन्हें उभारना बहुत आसान है। अत: समय आ गया है कि भारत सरकार पूरी तरह चौकन्नी रहे, क्योंकि शेख हसीना की लोकतांत्रिक सरकार के कायम रहने में ही भारत का हित है। अन्यथा भारत चारों ओर से दुश्मनों से घिरा हुआ है। खासकर पाकिस्तान और चीन भारत को हर तरह से तबाह करने पर आमादा हैं। ऐसे में बंगलादेश का भारत के साथ खड़ा होना, भारत की विदेश नीति की एक बड़ी सफलता होगी।

- डॉ. गौरीशंकर राजहंस

दूसरे हेलमेट की तीसरी परेशानी

बैठे-ठाले

- यशवन्त कोठारी

वर्मीजी राष्ट्रीय पौशाक अर्थात लुंगी और फटी बनियांन में सुबह-सुबह आ धमके। गुस्से में चूर्ण की पीक मेरे गमले में थूक कर बोले, ''यार, ये पीछे वाले हेलमेट की गजब परेशानी है। पहनो तो दोनों हेलमेट टकराते हैं, नहीं पहनो तो पुलिस वाले टकराते हैं। अब आप ही बताओ भाई साहब, नब्बे बरस की बूढ़ी दादी या नानी को मंदिर दर्शन ले जाने वाला पोता या नाती इस दूसरे हेलमेट से कैसे जीते? दादी-नानी जिसकी गर्दन हिल रही है, कपडे नहीं संभाले जा रहे हैं, वह बेचारी सर पर टोपलेनुमा हेलमेट को कैसे संभाले? मन्दिर में घुसो तो साग-सब्जी के थैलों की ऐसी जाँच होती है, जैसे सब के सब आतंकवादी या उठाईगिरे हैं। नारियल बाहर रख दो। क्या नारियलों के अन्दर बम भरा जा सकता है?'' वर्माजी ने लुंगी को फोल्ड किया और अपना प्रवचन जारी रखा।

हम सब की जान आफत में आ गई है। उपर से तुर्रा यह कि यह सब जनता की भलाई और सुरक्षा के लिए ही किया जा रहा है। भाई साहब आप बतायें कि चालान का डर दिखा कर नोट जेब में रखने में जनता की कौन-सी भलाई हो रही है? चालान भी कैसे-कैसे? सुनिये कल का किस्सा-मुझे रोक लिया। कागज दिखाओ। कागजात देख कर प्रदूषण प्रमाण-पत्र माँगा। प्रदूषण का चालान तीन सौ रुपये बताया गया। मैं सिट्टी-पिट्टी भूल गया, फिर चालानकर्ता ने समझाया रौंग साइड का चालान बनवा लो। साहब खडे हैं। मैंने रौंग साइड का चालान बनवा कर सौ रुपये की रसीद कटवा कर पचास रुपये का सुविधा शुल्क उनकी सेवा में प्रस्तुत कर जान बचाई।

वर्मा जी पिछले हेलमेट की आपने खूब कही। मिसेज जब चोंचवाला हेलमेट पहन कर पीछे बैठती है तो मेरे सिर पर हेलमेट टकराता है। बेचारे बड़े-बूढ़े दादा-दादी, नाना-नानी तो मन्दिर-मस्जिद तक भी नहीं जा पाते। सरकार ने यदि नियम बना ही दिया है तो इस पर नरम रुख अपनाना चाहिये। हज़ारों क़ानून शिथिल पड़े हुए हैं, एक और सही क्या फरक पड़ता है? वैसे सरकार का बस चले और कोई हेलमेट कम्पनी पूरा सुविधा शुल्क दे तो हर पैदल चलने वाले के लिए भी हेलमेट अनिवार्य कर दे। मैंने भी वर्माजी को आश्वस्त किया।

शहर के हर चौराहे पर चौथ वसूल करते ट्रेफिक वाले और शाम को सुविधा शुल्क का बंटवारा करते ये लोग देखे जा सकते है। रात के समय तो बस वारे-न्यारे हो जाते हैं। चौराहो पर कभी बत्ती नहीं जलती, जेबरा क्रास नहीं होता, स्टापलाइन नहीं होती लेकिन चालान बुक लेकर अपने बच्चों के लिए सुविधा शुल्क जमा करने वाले हर समय चाक-चौबन्द मौजूद रहते हैं। इधर-उधर पार्किंग में खड़े वाहनों को उठाने वाले ठेकेदार तो पुलिस वालों से ज्यादा बदतमीज हैं। वे पुलिस के नाम को भुनाते हैं और धमकाते हैं। यदि आप हरी लाइट में रवाना हुए और अचानक पीली हो गई तो भी चालान ठोंक दिया जाता है।

जीवन में चालान होना एक कटु-सत्य है और पुलिस को दिया जाने वाला सुविधा शुल्क और भी बडा सत्य। चालान के सच-झूठ की चर्चा करना भी शायद गलत हो और इसी के चलते मेरा एक और चालान हो जाये। अत: इस चालान पुराण को बन्द करते हुए निवेदन है कि पिछली सवारी पर बैठी बुर्जुग महिला के प्रति सम्मान न सही एक नरम रुख तो पुलिस-सरकार अपना ही सकती है। क्या खयाल है आपका?

सोने पे सोहागा

आज लड़कियाँ हर क्षेत्र में अग्रणी रहकर, समाज में अपना एक पृथक स्थान निर्धारित कर रही हैं। चाहे बोर्ड कक्षाएँ हो या विश्वविद्यालय के परीक्षा परिणाम, लड़कों को पीछे छोड़ने वाले आँकड़े हर वर्ष दिखाई पड़ते हैं। यह एक अच्छा संकेत है। यदि छात्राएँ पढ़ाई-लिखाई में अव्वल आने के साथ-साथ अपने खाली वक्त में छोटे-मोटे व्यवसाय भी सीख लें, तो सोने पे सोहागा जैसा होगा। कई बार देखा गया है कि लड़कियों द्वारा सीखा गया हुनर, उनके जीवन के कठिन दौर में एक संबल बन जाता है। यह एक अच्छी बात है। आज कई व्यवसाय ऐसे हैं, जो बाज़ार में अच्छी आमदनी का जरिया बन सकते हैं। ऐसे छोटे-छोटे व्यवसाय न केवल छात्राओं को आर्थिक मदद प्रदान करते हैं, वरन जीवन में स्वावलंबी बनाकर संतुष्टि भी प्रदान करते हैं।

- नीलम (सिकंदराबाद)

सुप्रीम कोर्ट की सराहनीय भूमिका

टूजी स्पेक्ट्रम घोटाले और सेना प्रमुख के जन्मतिथि मामलों पर सुप्रीम कोर्ट के फैसले से व्यवस्था के प्रति टूटता आम आदमी का विश्वास बरकरार है। देश में राजनीतिक नेताओं और प्रशासनिक स्तर पर बढ़ते भ्रष्टाचार और घोटाले की वजह से आम आदमी का विश्वास टूटने लगा है, लेकिन देश के नागरिकों का अभी भी उच्च स्तर पर 'न्याय प्रणाली' पर विश्वास कायम है। जब भी जनहित याचिका या कोई अन्य मामला हाइकोर्ट या सुप्रीम कोर्ट तक पहुँचता है आम आदमी को इस बात का पूरा भरोसा रहता है कि फैसला न्यायपूर्ण होगा। वस्तुत: उच्च अदालतें आम आदमी की अन्तिम आशा हैं। हमें इस बात पर गर्व होना चाहिए कि हमारे देश में, कुछ अपवादों को छोड़ कर, विद्वान संवेदनशील और ईमानदार लोग न्याय प्रणाली की ऊँची-ऊँची कुर्सियों पर बैठ कर न्याय की रक्षा कर रहे हैं।

- संतोष कुमार (हैदराबाद)